International Journal of Humanities and Arts

ISSN Print: 2664-7699
ISSN Online: 2664-7702
Impact Factor: RJIF 8.00
IJHA 2023; 5(2): 53-54
www.humanitiesjournals.net
Received: 04-07-2023
Accepted: 11-08-2023

रामजीत
स0 अ0 इण्टर कॉलेज, खालिसपुर, गाजीपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

Corresponding Author:
रामजीत
स0 अ0 इण्टर कॉलेज, खालिसपुर, गाजीपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

संत कबीर का समाज सुधार एवं समन्वयवाद, एक तुलनात्मक अध्ययन

रामजीत

DOI: https://doi.org/10.33545/26647699.2023.v5.i2a.92

प्रस्तावना

मध्यकालीन भारतीय समाज में जब सामंतवाद का बोलबाला था, शासन तलवारों के बल पर चलता था, धार्मिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में एक तरह से संक्रमणकाल की स्थिति थी, ऐसी विकट परिस्थिति में जब हर क्षेत्र में घनघोर अंधेरा छाया हुआ था, उस समय भारत भूमि पर एक विपुल प्रकाशपुंज के रूप में जिस महान संत मार्गदर्शक, समाज–सुधारक भक्त संत का अभ्युदय हुआ उसका नाम संत कबीर था। उल्लेखनीय है कि कबीर शब्द का अर्थ ही महान होता है। कबीर मूलतः भक्त थे। उनका मूल मार्ग ईश्वर की भक्ति का था और भक्ति के रास्ते में जितने भी धार्मिक, सामाजिक सांस्कृतिक अवरोध उत्पन्न हुए कबीर ने उसका डंटकर विरोध किया। उनके इसी काम को समाज सुधार के रूप में देखा जाता है। उन्होंने अपनी वाणी के माध्यम से समाज में फैले पाखण्ड और भ्रांतियों को दूर करने का प्रयास किया। संत कबीर ने कहीं से भी औपचारिक शिक्षा ग्रहण नहीं की थी। उनका ज्ञान, आत्मज्ञान था जिसको उन्होंने अपनी साधना के द्वारा प्राप्त किया था। उन्होने खुद लिखा है–

''मसि कागद छूयो नहीं, कलम गहीं नहीं हाथ।

कबीर केवल कवि नहीं थे अपितु वे महान युग द्रष्टा और सच्चे मार्गदर्शक और आत्मज्ञानी संत भी थें। तत्कालीन समान में जनता की धर्मान्धता तथा शासकों की नीति के कारण हिन्दु–मुसलमानों का आपसी विरोध बहुत बढ़ गया था। स्वंशासक भी धर्मांध थे। उल्लेखनीय है कि उस समय के शासक सिकन्दर लोदी ने एक ब्राह्मण का सर इसलिए कलम करवा दिया क्योंकि उसने ईश्वर और अल्ला को एक समान कहा था। उस समय हिन्दू और मुसलमान, धर्म के सच्चे रहस्य को भूलकर कृत्रिम विभेदों द्वारा उत्तेजित होकर धर्म के नाम पर अधर्म कर रहे थें, ऐसी स्थिति में सच्चे मार्गदर्शक का श्रेय संत कबीर को है।

कबीर ने जहां धार्मिक और दार्शनिक क्षेत्र में सुधार लाने का प्रयास किया, वहीं उन्होंने समकालीन जीवन में परिव्याप्त जातिगत ऊँच–नीच और भेदभाव की भावना, छुआछूत की भावना, दुराचार की समस्या, मद्यपान और मांस भक्षण की कुप्रवित्तियों आदि पर तीव्र प्रहार किया। समाज सुधार की दृष्टि से कबीर की उक्तियाँ इतनी अधिक मार्मिक हैं कि वे तत्कालीन समाज पर ही नहीं अपितु आधुनिक कालीन सामाजिक, धार्मिक कुरीतियों पर भी पूर्णतः चरितार्थ होती है।

''हिन्दु अपनी करै बढ़ाई गागर छुअन न देई।
वेश्या के पायन तर सोवै, यह देखो हिन्दुआई।।
मुसलमान के पीर औलिया, मुरगा–मुरगी खाई।
खाला केरी बेटी ब्याहैं, घरही मा करैं सगाई।।''[1]

आचरण की सात्विकता पर बल : कबीर का एक महान कार्य आचरण की शुद्धता पर बल देना था। साधना में माया को बाधक मानते हुए उन्होंने लिखा है–

''चलो–चलो सब कोऊ कहे, पार न पहुँचे कोय।
एक कंचन और कामिनी, दुर्गम घाटी दोय।।[2]

परन्तु इसका अर्थ यह नही कि कबीर नारी विरोधी थे। वे पवित्र आचरण वाली पतिव्रता स्त्रियों की भूरि–भूरि प्रशंसा करते है।

''पतिव्रता मैली मली, काली कुचीत कुरूप।
पतिबरता के रूप पर, बारों कोटि स्वरूप।।
उस संग्रथ का दास है, कदे न कोई समाज।
पतिब्रता नंगी रहे, तो उसही पुरूष को लाज।।[3]

छुआछुत का विरोध : कबीर ने ब्राह्मण वर्ण द्वारा छुआछूत का प्रपंच खड़ा करने की भर्त्सना करते हुए कहा था–

''काहे को कीजै पाण्डे छोत विचार छोतहि से उपना संसार।
जो तुम बाभन–बाभनी जाया, आन बाट होय काहे न आया।''[4]

माँस भक्षण का विरोध : मुसलमानों के साहचर्य के कारण हिन्दुओं मे भी मांस भक्षण की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही थी, जिसका कबीर ने तीव्र भर्त्सना की है। उन्होंने इस सन्दर्भ में बड़ा ही सजीव दृष्टांत दिया है–

''बकरी पाती खात है, ताकी काढ़ी खाल।
जो नर बकरी खात है, ताको कौन हवाल।।
तिलभर मच्छी खाय के, कोटि गऊ दे दान।
काशी करवट ले मरे, निश्चय नरक निदान।।''[5]

इसी प्रकार मुसलमानों को फटकारते हुए उन्होने कहा–

''दिन में रोजा रहत हैं, रात हनत हैं गाय।
यह तो खून वह बंदगी, कैसे खुशी खुदाय।।[6]

कबीर की साधना आत्म साधना थी। उन्होंने मुसलमानों की अजान पद्धति पर सवाल उठाते हुए कहा–

''काँकर–पाथर जोड़ि कै, मंजिल दई बनाय।
ता चढ़ि मुल्ला बाग दे, क्या बहरा हुआ खुदाय।।''[7]

वे कहते है–

''चीटीं के पग हालर बाजै, सोभी साहब सुनता है।''

प्रेम और ज्ञान का समन्वय : कबीर ने अपने युग के अमानवीय तत्वों का विरोध करते हुए परस्पर मेल–मिलाप और प्रेम का जीवन बिताने का उपदेश दिया। उन्होंने ज्ञान को प्रेम से ही सम्भव मानते हुए कहा है–

''पोथी पढ़ि जग मुआ, पंण्डित भया न कोय।
ढाई आखर प्रेम का, पढै सो पंण्डित होय।।''[8]

अगर हम संत साहित्य को गहराई से देखते है तो कबीर, गोस्वामी तुलसीदास, रविदास, नानकदेव आदि सभी ने समन्वयवादी विचारों का प्रतिपादन किया है। गोस्वामी जी ने कहा है–

'रामहि केवल प्रेम पियारा।
जान लेहु जो जानन हारा।।[9]
मिलै न रघुपति बिनु अनुरागा।
कोटि जोग, जप, तप उपवासा।।[10]

संत कबीर : कबीर के अनुसार ईश्वर केवल प्रेम और भक्ति का भूखा है, सभी चर–अचर उसके अंश हैं। इसलिए उसे पाने के लिए प्रेम और भक्ति की आवश्यकता है। ईश्वर किसी जाति–पाति का भेद नहीं रखता।

जाति–पाति पछै नहीं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई[11]

संत रविदास जी की वाणी अत्यन्त विनम्र और सरल थी। उनका मानना था कि किसी भी धर्म, जाति, वर्ण का मनुष्य अपने जीवन को सफल बना सकता है। गुरू रविदास ने भी इस बात पर बल दिया कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी वर्ग के लिए भक्ति के दरवाजे खुले है। गुरू रविदास कहते है कि साधु किसी भी वर्ण का हो, गरीब हो, ईश्वर वहाँ निवास करता है। ब्राह्मण, वैश्य, शुद्र, डोम, चाण्डाल, मलेच्छ सभी भगवान के भजन से मुक्त होते है, और अपने तथा दूसरों के कुल को भी तारते है–

''जिन्ह कुल साधु वैसनों होई
बरन अबरन रंकू नहीं ईसरू, विमल बासु जानीए जागी सोई
ब्राह्मण बैस सूद्र अरूख्यत्री डोम चंडार मलेच्छ मन सोई।
होई पुनीत भगवन्त भजन से आपु तारि तारै कुल दोई।

कबीर के व्यक्तित्व का एक महान पक्ष समन्वयवाद था। कबीर समग्र रूप से समाज, धर्म, राजनीति आदि के क्षेत्र में समन्वय चाहते थे। वे कहीं किसी प्रकार का असंतुलन नहीं चाहते थे, इस सम्बन्ध में उनके व्यक्तित्व का मूल्यांकन करते हुए आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लिखा है'– ''कबीर ऐसे ही मिलन बिन्दू पर खड़े थें जहाँ से एक ओर हिन्दूत्व निकल जाता है और दूसरी ओर मुसलमानत्व, जहाँ एक ओर ज्ञान निकल जाता था और दूसरी ओर शिक्षा, जहाँ एक ओर भक्ति का मार्ग निकल जाता था और दूसरी ओर योग मार्ग, जहाँ एक ओर निर्गुण भावना निकल जाती थी और दूसरी ओर सगुण भावना उसी चौराहे पर खड़े थे। वे दोनों ओर देख सकते थे और परस्पर विरूद्ध दिशा में गये हुए मार्गों के दोष–गुण उन्हें स्पष्ट दिखाई दे जाते थे।''
संक्षेप में हम कह सकते हैं कि संत कबीर जैसे महापुरूष का मूल्यांकन करना हम जैसे लोगों के लिए असम्भव है। उनका विराट व्यक्तित्व, ज्ञान साधना, बोध, ईश्वर से आत्म साक्षात्कार, महान भक्ति और प्रेरणा ने जो ज्ञानपुंज समाज को बख्सा, वह हर परिस्थिति, हर समय में प्रासंगिक है। जनमानस के लिए मार्गदर्शक है। युगों–युगों तक कबीर के यह महान उपदेश लोक मानस को दिशा प्रदान करते रहेंगें।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. सरस्वती पाण्डेय हिन्दी साहित्यक वस्तुनिष्ट इतिहास, पृष्ट 101
2. संपादक डा0 वर्मा रामलाल, युग पुरूष कबीर, डा0 वर्मा रामचन्द्र भारतीय ग्रंथ निकेतन, दिल्ली। संस्करण 1978
3. डा0 शर्मा शिवकुमार, हिन्दी साहित्यः युग और प्रवृत्तियाँ, अशोक प्रकाशन, नई सड़क दिल्ली। संस्करण 1990
4. श्यामसुन्दर दास, कबीर ग्रंथावली,
5. डा0 रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृष्ट 65
6. संत कबीर बीजक पृष्ट 338
7. कबीर ग्रंथावली पृष्ट 214 संस्करण 2013
8. कबीरदास, कबीर बीजक
9. तुलसीदास, राम चरित मानस पृष्ट 457 दो0 136 ।। 1।।
10. तुलसीदास, रामचरित मानस पृष्ट 966 दो0 61 ।। 1।।
11. श्यामसुन्दर दास, संत कबीर कबीर ग्रंथावली
12. संपादक डा0 युगेश्वर, रैदास समग्र, हिन्दी प्रचारक पब्लिकेशन वाराणसी पृष्ट 125